International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
e-ISSN :2581-9925, Impact Factor (Cosmos: 7.555 & I2OR: 5.105), Volume 08, No. 01(I), January - March, 2026, pp. 161-164

राजस्थान के धार्मिक जीवन में गज का स्थान

सोहन लाल बलाई[1*] | डॉ. श्रीकृष्ण यादव[2]

[1]शोधार्थी, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़, राजस्थान।
[2]शोध निर्देशक एवं सह आचार्य, चित्रकला विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ, राजस्थान।

[*]Corresponding Author: slbarala@gmail.com

Citation: बलाई, सोहन एवं यादव, श्रीकृष्ण (2026). राजस्थान के धार्मिक जीवन में गज का स्थान. International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science, 08(01(I)), 161–164. https://doi.org/10.62823/IJEMMASSS/8.1(I).8655

सार

प्राचीन कला में हाथी का चित्रण भिन्न–भिन्न आकारों में पत्थर को काटकर किया गया है और साथ ही दिवारों पर चित्रित किया गया है। मानव ने अपने मन की भावनाओं को चित्र व मूर्ति के माध्यम से अभिव्यक्त की है। जिनके अवशेष हमें आदिकाल से अब तक अनेकों स्थानों पर प्राप्त होते हैं । प्रस्तुत शोध पत्र में मैंने इसी तथ्य की पुष्टि करने का प्रयास किया है।

शब्दकोशः *अभिव्यक्त, साक्ष्य, मान्यता, ऋग्वेद, उत्कीर्ण, शिलालेख, जातक, यज्ञ, प्रतिष्ठा।*

प्रस्तावना

अध्ययन का उद्देश्य

कला मानव संस्कृति की उपज है इसका उदय मानव की उत्पत्ति के साथ ही हुआ। और कला सौंदर्य भावनाओं की परिचायक है। प्राचीन काल में मानव कन्दराओं व गुफाओं में रहकर विभिन्न प्रकार से चित्रण कार्य करता था। जिसमें मानव व पशु–पक्षियों आदि आकृतियों का चित्रण किया करता था। पशु–पक्षियों में एक विशालकाय गज का भी चित्रण किया गया हैं। अतः प्राचीन काल से वर्तमान तक गज का चित्रण भी कला में अन्य पशुओं के साथ–साथ विशेष स्थान रखता है इतने विशालकाय शरीर वाले पशु का बहुत ही सुंदर ढंग से अनेकों प्रकार से चित्रण किया गया है। भारतीय धार्मिक व्यवस्था में हाथी का स्थान प्रथम पूज्य गजानन्द गणेश के रूप में माना गया है वैदिक कालीन संस्कृति से वर्तमान अवस्था तक गज को सदैव भारत की धार्मिक संस्कृति का अंग रहा है

साहित्यावलोकन

प्रस्तुत शोध पत्र का विषय स्तर काफी विस्तृत तथा अधिक संसाधनों की आवश्यकता को दर्शाता है। चूंकि प्रस्तुत शोध विषय राजस्थान के धार्मिक जीवन के इतिहास से सम्बन्ध रखता है। अतः संसाधनों की सीमितिता के कारण पूर्व में हुए विभिन्न शोधों का गहन अध्ययन करके शोध निष्कर्ष निकाला है। इसके अतिरिक्त सम्बन्धित विषय पर आधारित विभिन्न लेखों, शिलालेखों, पाण्डुलिपियों, पुस्तकों व अन्य शोध–ग्रन्थों व पत्र–पत्रिकाओं का भी अध्ययन किया है।

[*] Copyright © 2026 by Author's and Licensed by Inspira. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work properly cited.

विश्लेषण

पृथ्वी पर कला का इतिहास उतना ही प्राचीन है, जितना की मानव सभ्यता के विकास का इतिहास है।[1] मनुष्य ने इस धरा पर प्रकृति की गोद में रहकर अपने विकास की बहुत ही सुव्यवस्थित क्रमबद्ध गाथा लिखी। कला का उद्‌गम भी प्रागैतिहासिक काल से ही माना जाता है। समय के साथ–साथ ज्यों–ज्यों मानव ने विकास किया, भारत में भी यह कला अपने उत्कर्ष को प्राप्त करती रही।[1] आदिमानव जंगलों में निवास कर अपना जीवनयापन करता था। आदिमानव जंगल में रहकर पशु पक्षियों का शिकार कर व कंदमूल फल खाकर अपना पेट भरता था। धीरे–धीरे मानव समूह में रहने लगा और कृषि कार्य करना व पशु–पक्षियों को साथ रखना प्रारंभ किया। मनुष्य ने पशुओं को भोजन के साथ कृषि कार्य में प्रयोग करने लगा।

मानव सभ्यता के विकास के साथ–साथ पशुओं की महत्व के प्रमाण व साक्ष्य हमें प्राचीन भारतीय कला में प्राप्त होते हैं। प्राचीन मानव द्वारा कला में उन सभी पशु–पक्षियों को अंकित किया गया है। जो उससे किसी ने किसी रूप में संबंध रखते थे। प्राचीन भारतीय कला में हाथी, घोड़ा, मोर, वृषभ, हिरण, गैंडा, गरुड़, हंस, उल्लू, बारहसिंगा, भालू, बैल, भैंस, बकरी, नीलगाय, सांभर आदि का चित्रण मिलता है।

भारतीय धार्मिक व्यवस्था में हाथी का महत्वपूर्ण स्थान माना गया है। वैदिक कालीन संस्कृति से वर्तमान अवस्था तक हाथी को सदैव भारत की धार्मिक संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है। प्राचीन वेदों, उपनिषदों, पुराण आदि धार्मिक ग्रन्थों में हाथी के महत्व के विषय में अनेकों प्रमाण मिले हैं। ऋग्वेद काल से ही हाथी धार्मिक मान्यताओं का विषय रहा हैं। मध्य अफ्रीका के म्बुति लोगो की मान्यता है कि उनके अपने मृत पूर्वजों की आत्माएं हाथियों में निवास करती हैं। वे मानते है कि उनके मृत पूर्वज प्रमुख हाथियों के रूप में पुनर्जन्म लेंगे। आधुनिक नाइजीरिया में इग्बो–उक्वू के लोग अपने मृत नेता के पैरों के नीचे कब्र में हाथी दांत रखते थे। इस प्रकार से संसार के अनेक देशों में हाथियों के साथ धार्मिक मान्यताएं मिलती हैं।

हिन्दू धर्म में हाथी अथवा गज को भगवान गणेश के विशेष प्रतिष्ठा रूप में देखा गया है। गणपति शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में प्राप्त होता है। हिंदू देवी देवताओं में गणेशजी की एक विशेष प्रतिष्ठा है। हिंदू धर्म में गज की पूजा अर्चना अनेक रूपो में की जाती है। अजन्ता की गुफाओं में बौद्ध धर्म से सम्बन्धित जातक कथाओं में भगवान बुद्ध को पुर्नजन्म में हाथी के रूप चित्रित किया गया है।

प्रागैतिहासिक काल से ही राजस्थान का जनजीवन धार्मिक चेतना के प्रति निष्ठावान रहा है। सरस्वती, दृषद्वती तथा आहड़ आदि नदियों की घाटियों से प्राप्त भग्नावशेष एवं सामग्री उस अतीतकाल की धार्मिक स्थिति का उल्लेख करती है। कालीबंगा के किले की चारदीवारी में स्थित 5–6 चबूतरे तथा कुछ वेदियों की कतारें इस बात की प्रमाण हैं कि यहाँ के निवासियों में धर्म तथा उससे सम्बन्धित प्रक्रियाएँ उनके जीवन के प्रेरक तत्त्व थे । साधारण बस्तियों के दायरों से प्राप्त पूजागृह तथा वेदियों के अवशेष व्यक्तिगत धार्मिक भावनाओं को व्यक्त करते हैं। आहड़ तथा गिलैंड के भाण्डों के भण्डारों में नालीवाले, बैठकवाले तथा गौमुखवाले मिट्टी के बर्तन उस समय की पूजा विधि के साधन थे। इन उपकरणों से ऐसा लगता है कि इन घाटियों में यज्ञकर्ताओं का एक वर्ग था जो इन उपकरणों का पूजा, यज्ञ या अर्चना के लिए उपयोग करता था।[2]

राजस्थानी सामाजिक जनजीवन धार्मिक एवं दार्शनिक मान्यताओं और आस्थाओं के बहुरंगी ताने–बाने से गुंथा हुआ है, जो इस भू–भाग के अतीत, सांस्कृतिक इतिहास तथा वीर पूजा की भावनाओं में जन्म लिया है तथा सम्पूर्ण प्रदेश की सांस्कृतिक धारा ने जिन्हें एकीकृत और समन्वित रूप भी प्रदान किया है। यहां सनातन संस्कृति की धारा को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। वैदिक काल से लेकर मध्यकाल तक की धार्मिक और दार्शनिक आस्था को रामायण और महाभारत के पात्रों, कृष्ण लीला, गीता भागवत, तीर्थ यात्रा, मोक्ष, गया श्राद्ध, दान–धर्म आदि के प्रति श्रद्धा समान रूप से दिखती है, यहां दीपावली, होली जैसे तीज–त्यौहारों को प्रमुख माना जाता है, साथ ही इस मरू भूमि की विशिष्ट परम्पराएँ भी उस धारा में आकर उसे विशिष्ट रंग प्रदान करती हैं जो गणगौर, तीज आदि के मेलों में, रामदेवजी, गोगाजी, तेजाजी, पाबूजी, भैरूजी, माताजी आदि स्थानीय लोक देवी – देवताओं के प्रति आस्था में और यहाँ के रीति–रिवाजों में परिलक्षित होती हैं। हजारों वर्षों के सांस्कृतिक

इतिहास के समन्वित प्रभावों से पनपी इस परम्परा का आकलन सरल नहीं है, किन्तु उसका चित्र और परिदृश्य यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। यह विविध प्रभावों से ढली यहाँ की सामाजिक संस्कृति का स्वरूप भी स्पष्ट किया जा सकता है।[3]

राजस्थान के सामाजिक जीवन में प्राचीन काल से ही धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन में गज (हाथी) को शक्ति, समृद्धि, और ऐश्वर्य का प्रतीक माना गया है। धन की देवी लक्ष्मी के गजलक्ष्मी स्वरूप में हाथियों को धन और सौभाग्य के वाहक के रूप में पूजा अर्चना की जाती है, गजलक्ष्मी देवी लक्ष्मी का स्वरूप है, जिसमें हाथी जल से लक्ष्मी का अभिषेक करते हैं। यह स्वरूप धन, स्थिरता और समृद्धि का प्रतीक है। प्रतिवर्ष दीपावली पर गजलक्ष्मी की साधना से व्यापार में उन्नति और सुख–शांति प्राप्त होती है। जिससे दरिद्रता दूर कर स्थिरता लाने की धार्मिक मान्यता हैं। इसके अलावा हाथी ऐतिहासिक रूप से राजसी वैभव में प्रतिष्ठा, शोभायात्राओं और देव दर्शन का अभिन्न अंग रहे हैं। गणेश, गणपति, सिद्धि–विनायक आदि नामों से गणपति की आराधना प्रमुख रही है। कोई भी शुभ कार्य का आरम्भ इनके पूजन के बिना नहीं हो सकता।[4] विनायक पूजा को विवाह तथा संस्कार सम्बन्धी कार्यों में मन्त्रों द्वारा इनकी उपस्थिति की प्रार्थना की जाती है और कार्य की समाप्ति पर उन्हें भेंट, पूजा और नैवेद्य से संतुष्ट कर विसर्जन भी विधिवत् किया जाता है।[5]

राजस्थान स्थापत्य में अंबिका मंदिर उदयपुर से करीब 50 किलोमीटर दूर गिर्वा की पहाडियों के बीच बसे कुराबड़ गांव के समीप अवस्थित इस अंबिका मंदिर में दायीं ओर जाली के पास सफेद पाषाण में निर्मित नृत्य भाव में गणपति की दुर्लभ प्रतिमा है कोटा से 51किलोमीटर दूर बाडोली में नो मन्दिर बने हैं जिनमें एक गणेश मन्दिर के नाम से ज्ञात है।[6]

लक्ष्मी समृद्धि एवं धन की अधिष्ठात्री देवी मानी जाती है। हिन्दू देव परिवार में लक्ष्मी का स्वतंत्र स्थान है। विष्णु पुराण के अनुसार लक्ष्मी की उत्पत्ति चौदह रत्नों के साथ देवों तथा असुरों द्वारा समुद्र मंथन के उपरान्त हुई। **गजों** द्वारा गंगा और यमुना के जल से अभिषिक्त, कमल पर आसीन, लक्ष्मी सागर तल पर अवतरित होती है। मूर्तिकला में लक्ष्मी का यह स्वरूप **गजलक्ष्मी** नाम से जाना जाता है। **गजलक्ष्मी** का यह विशिष्ट अभिप्राय गुप्तकाल के भीटा एवं बसाढ़ से प्राप्त सिक्कों पर मिलता है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण में लक्ष्मी की प्रतिमा का विवरण अमृतघट, कमल, बिल्व तथा शंख लिए हुए दिया गया है। उसके पीछे **गज–युगल** उसके सिर पर घटों से जलाभिषेक करते हुए अंकित किये जाने चाहिए। ये दोनों **गज** शंख एवं पद्मनिधि के प्रतीक माने जाते हैं। **गजलक्ष्मी** की प्रतिमाएं अधिकतर राजस्थान के उत्तर गुप्तकालीन मंदिरों में उत्कीर्ण हैं पड़ानगर (अलवर), ओसियां (जोधपुर), आबानेरी (जयपुर), तथा झालरापाटन के मंदिरों में मूर्तियां प्राप्त होती है।[7]

जयपुर में करीब 160 साल पुराना और अनूठा लक्ष्मी मंदिर है. यह एक मात्र ऐसा मंदिर है जहां मां लक्ष्मी दो हाथियों के साथ कमल पर विराजमान हैं। जयपुर के महाराजा सवाई रामसिंह द्वितीय के शासनकाल में महालक्ष्मी के मंदिर निंमाण करवया गया था।

गज लक्ष्मी मंदिर – जयपुर

राजस्थान के टोंक जिले में उनियारा रोड पर ककोड़ गाँव के पास गुमानपुरा क्षेत्र में एक ही विशाल पत्थर से तराश कर जीवंत हाथी की प्रतिमा का निर्माण किया गया है। यह सिर्फ स्थापत्य कौशल का प्रमाण ही नहीं है, बल्कि यह धार्मिक आस्था और लोकस्मृति का प्रतीक भी है।

राजस्थान के सभी मंदिरों में गज का चित्रण मिलता है। जो राजस्थान की धार्मिक सहिष्णुता का परिचायक हैं। हाथी राजस्थान की लोक संस्कृति, मंदिरों की वास्तुकला और पारंपरिक शोभायात्राओं में ऐश्वर्य और शुभता के प्रतीक के रूप में उपयोग किए किये गये हैं।

निष्कर्ष

कला मानव सभ्यता के विकास का इतिहास है। मनुष्य ने प्रकृति की गोद में रहकर अपने विकास की गाथा लिखी। समय के साथ–साथ ज्यों–ज्यों मानव ने विकास किया, उसी के साथ मानव समूह में रहते हुऐ कर कृषि कार्य कर पशु–पक्षियों को साथ रखना प्रारंभ किया। मानव अपनी अभिव्यक्ति को अभिव्यक्त करने के लिए अनेकों पशु पक्षियों के चित्र व मूर्तियां बनाईं जिनमें हाथी को विशेष स्थान दिया गया है। राजस्थान में हाथी को सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक रूप से विशेष आदर सम्मान मिला है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मूतिकला का इतिहास, 2022 पृ. 3
2. डॉ. गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, 2009, पृ. 95
3. डॉ. जयसिंह नीरज. डॉ. भगवतीलाल शर्मा, राजस्थान का सांस्कृतिक परम्परा, 2008, पृ. 17
4. डॉ. गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, 2009, पृ. 98
5. राजस्थान थ्र दि एजेज, पृ. 390–3396
6. डॉ. नीलिमा वशिष्ठ, राजस्थान की मूतिकला परम्परा, 2001, पृ. 41
7. डॉ. नीलिमा वशिष्ठ, राजस्थान की मूतिकला परम्परा, 2001, पृ. 108–109.

❑❑❑